ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2019; SP7: 82-84

डा० मधुरीमा
इतिहास विभाग, ल.ना.मि.वि.वि., दरभंगा, बिहार भारत.

(Special Issue-7)
"International Conference on Science and Education: Problems, Solutions and Perspectives"
(3rd June, 2019)

इतिहास की भारतीय अवधारणा

डा० मधुरीमा

प्रस्तावनाः

कुछ पाश्चात्य विद्वानों का विचार है कि भारतवासियों में स्पष्ट ऐतिहासिक दृष्टिकोण का अभाव है। घटनाओं में प्रस्तुतिकरण में उन्हें तिथिक्रम का ज्ञान नहीं था। तथ्यों को कल्पित एवं पौराणिक कथाओं के परिवेश में रखने की प्रवृत्ति ने इस मान्यता को आधार प्रदान किया है। इन्हीं विद्वानों की अवधारणा है कि भारतीय घटनाओं के तथ्यपरक विवरण में रुचि नहीं रखते थे। पाश्चात्य विद्वान लोएस डिकिंसन ने स्पष्ट लिखा है हि हिन्दू इतिहासकार नहीं थे। उनके अनुसार–भारत में मनुष्य प्रकृति के समक्ष अपने को तुच्छ और असमर्थ पाता है, परिणामस्वरूप उसमें नगण्यता तथा जीवन की निस्सारता जन्म लेती है, उसे जीवन की अनुभूति, एक भयानक दुरूस्वप्न के रूप में होती है। दुःस्वप्न का इतिहास नहीं होता है। भारतीय अवधारणा के संबंध में लोएस डिकिंसन का यह तर्क है। डॉ. हीरानंद शास्त्री ने भी इसी प्रकार का तर्क प्रस्तुत करते हुए कहा है कि प्राचीन भारतीयों ने इतिहास के प्रति विशेष ध्या नहीं दिया, क्योंकि वे अतीत तथा वर्तमान भौतिक जीवन की अपेक्षा आगामी जीवन में रुचि रखते थे।

डॉ. गोविन्दचन्द्र पाण्डे ने डिकिंसन के मत का खण्डन करते हुए कहा है कि–उनका विचार हास्यास्पद प्रतीत होता है। भारतीयों ने वर्तमान जीवन को कभी भी नगण्य नहीं माना है। यदि इतिहास कर्म–प्रधान रहा है तो भारतवर्ष सदैव महापुरुषों की कर्मभूमि रहा है।

पृथिव्यां भारतं वर्ष कर्मभूमिरुद्वाहृता।
देहं लब्ध्या विवेकाढ्यं द्विजत्वं च विशेषतः।
तत्रापि भारतवर्षे कर्मभूमाँ सदुर्लभम्
प्रयाति कर्मभूमिर्बह्यन नान्यलोकेषु विद्यते।
अभि संपूजितं यस्माद् भारतं बहुपुण्यदम्।
कर्मभूमिरतो देवैवर्ष तत्मात्प्रकीर्तितम्

सम्पूर्ण विश्व में भारतवर्ष जैसा कोई देश भी नहीं है जिसने इतने बड़े सुदूर अतीत को सुरक्षित रखा है। अतीत का स्वरूप दो प्रकार का होता है–(प) मृत अतीत–जैसे घटनाएँ तथा व्यक्ति (पप) जीवंत अतीत–इसमें परम्पराओं का संप्रेक्षण एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में होता रहता है। निश्चित रूप से परम्परा के प्रति चेतना तथा उत्तरदायित्व की भावना भारतीयों में विशेष रूप से विद्यमान थी। इसी भावना के कारण प्राचीन ग्रथों का सम्पाद समय–समय पर होता रहा है। यही नहीं, बल्कि भारतीयों ने इतिहास की पुस्तकों को सदैव नूतन तथा बुद्धिगम्य बनाने का प्रयास किया है। अतः स्पष्ट है कि प्राचीनकाल से वर्तमान तक भारतीयों में इतिहास की अवधारणा रही है। परिणामस्वरूप समय तथासमाज की आवश्यकताओं के अनुरूप भारतीय इतिहासकारों ने ऐतिहासिक ग्रंथों का सम्पादन किया है। इतिहास की अवधारणा के प्रति विशेष चेतना का प्रमाण इससे बढ़ कर क्या हो सकता है।

भारतीय अवधारणा के अनुसार इतिहास एक निरन्तर चलायमान युग–चक्र है। मानव–जीवन, उसका सुख–दुरूख इसी चक्र द्वारा नियंत्रित होता है। प्रत्येक चक्र चार युग में विभक्त होता है। ब्रह्म द्वारा युग–चक्र की सृष्टि होती है।

Correspondence
डा० मधुरीमा
इतिहास विभाग, ल.ना.मि.वि.वि., दरभंगा, बिहार भारत.

1. कृत– भारतीय अवधारणा के अनुसार कृत मानव जीवन का स्वर्ण युग है। सुख संबंधी सभी साधनों तथा उपकरणों से युक्त है।
2. त्रेता–यह युग–चक्र का द्वितीय चरण है। कृत की अपेक्षा मानवीय गुणों तथा सुखमय जीवन के साधनों तथा उपकरणों में अभाव का आभास होने लगता है।
3. द्वापर–युग–चक्र का यह तृतीय चरण है। इस युग में मानवीय दुःख का प्रारम्भ होता है। इसे संघर्ष का युग भी मानते हैं। रोग–व्याधि ने मनुष्य पीड़ित होने लगता है। समाज में बाह्य संस्कारों का महत्व बढ़ जाता है। समाज की निरन्तर बिगड़ती स्थिति को नियंत्रित करने के लिए सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक तथा सामाजिक नियमों का प्रतिपादन किया जाता है। युग–चक्र का यह संस्कार तथा नियम–प्रधान युग माना जाता है।
4. कलियुग–युग–चक्र का यह अंतिम भाग है। मानवीय जीवन दुरूख तथा निराशा की पराकाष्ठा पर पहुँच जाता है। दुरूख तथा अन्याय के परिवेश में मनुष्य धर्म की उपेक्षा करने लगता है। धर्म की उपेक्षा मानव–जीवन के दुःख का मूल कारण है। समाज में पारस्परित संघर्ष और स्वार्थ के वातावरण में सम्पूर्ण मानव–समाज का जीवन अत्यधिक दुरूखमय हो जाता है। अंत में मानव–जगत का सर्वनाश तथा युग –चक्र विनष्ट होकर परमब्रह्म में विलीन हो जाता है।

यह युग–चल निरंतर चलता रहता है। धर्म की उपेक्षा तथा मानव–जीवन का कष्ट जब हमारी पराकाष्ठा पर पहुँच जाता है तो मानव जाति के उद्धार के लिए ईश्वर का अवतार होता है। अवतारवाद भारतीय इतिहास की अवधारणा है। भगवान कृष्ण तथा राम का जन्म इस अवधारणा की पृष्टि करता है।

इतिहास निर्माण के संबंध में कहा जाता है कि प्रत्येक व्यक्ति इतिहास का सृष्टा नहीं होता है। प्रत्येग युग तथा समाज में इतिहास का निर्माण कुछ ही लोगों द्वारा होता है। ऐतिहसिक शब्दावली में उन्हें महान शक्ति अथवा जननायक की संज्ञा दी जाती है। जननायक कौन हो सकता है, जो समाज का नेतृत्व कर सके तथा सम्पूर्ण मानव जाति का पथ–प्रदर्शन कर सके, उसे ही जननायक की संज्ञा दी जा सकती है। प्राचीन काल से आधुनिक युग तक जननायकों ने समाज का नेतृत्व करके इतिहास का निर्माण किया है। राम, कृष्ण, गौतम बुद्ध, महावीर स्वामी, तुलसीदास, महात्मा गांधी तथा जवाहरलाल नेहरू जननायक तथा इतिहास के सृष्टा माने जाते हैं।

भारतीय इतिहास की अवधारण में यदि अवतारवाद के सिद्धांत से धार्मिक परिछाया को हटा दिया जाये तो विभिन्न अवतारों को महान व्यक्तियों के रूप में समझा जा सकता है। इन जननायकों ने विभिन्न युगों में जन्म लेकर समाज में असामाजिक तथा अवांछनीय तत्वों का अंत करके, एक नवीन रूप प्रदान किया है। गीता तथा रामचरितमानस में अवतारवाद के सिद्धांत को सर्वाधिक सुन्दर ढाग से व्यक्त किया गया है। यदि इतिहास का स्वरूप उद्देश्यपरक है तो निश्चित रूप से अवतारवाद के पीछे एक सामाजिक परियोजना रही है।

यदा यदा ही धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।।
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दृष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे–युगे।।

तुलसीदास ने भी राम के अवसर को सामाजिक आवश्यकता तथा अनिवार्यता के रूप में देखा है। भगवान राम का जन्म सामाजिक तथा युगचक्रीय परियोजना के अन्तर्गत हुआ है।

जब जब होहिं धरम कै हानी।
बाढहिं असरू महा अभिमानी।।
तब तब प्रभु धरि विविध शरीरा।
हरहिं कृपा निधि सज्जन पीरा।।

इस अवधारणा के अनुसार मानव–इतिहास में जब कभी नैतिक अथवा सामाजिक अव्यवस्था के परिणामस्वरूप मानव–जाति के दुःखों में वृद्धि हुई है, तब साधुओं की रक्षा तथा दुष्टजनों के विनाश के लिए जननायक के रूप में ईश्वर का अवतार हुआ है। इस अवतार का सामाजिक उद्देश्य अव्यवस्था को समाप्त करना तथा धर्म की पुनर्स्थापना रहा है। अवतारवादी जननायक समसामयिक सामाजिक अपेक्षाओं को ठीक पहचानते हैं। उसके अनुसार कार्य करते हुए इतिहास–प्रक्रिया को विशिष्ट आयाम प्रदान करते हैं। इस प्रकार महान व्यक्ति के रूप में वे इतिहास के सृष्टा हैं। इतिहास– प्रक्रिया इन महान जननायकों की इच्छा एवं कार्यव्यापारों पर नहीं, अपितु स्वयं एक विकासशील धारा है जिनमें इन महापुरुषों का कार्य भूमिका मात्र रहा है।

अवतार का निश्चित ऐतिहासिक प्रयोजन होता है। अवतारी महापुरुष समसामयिक सामाजिक व्यवस्था से स्वतंत्र नहीं होते। यह परम सत्ताकाल के द्वारा नियंत्रित होती है। किसी विशेष युग में अवतार का निर्धारण सामाजिक आवश्यकता तथा अनिवार्यता की पूर्ति होता है।

अवतारवाद के इस सिद्धांत ने भारतीयों के मस्तिष्क में एक भाग्यवादी प्रवृत्ति को जन्म दिया है। विपत्ति के समय अकर्मण्य होकर ईश्वर के अवतार द्वारा विपत्ति निवारण की आशा इस प्रवृत्ति की देन है। अवतारवाद में एक निहितार्थ छिपा हुआ है। अवतार वांदनीय सामाजिक तत्वों का प्रतिनिधित्व करता है, साथ ही यह एक विरोधी तथ्व की पूर्वापेक्षा भी रखता है। इस विरोधी तत्व को दुष्टता का प्रतीक माना जाता है। इन दोनों विरोधी तत्वों का संघर्ष शाश्वतकाल से चला आ रहा है। इतिहास में इस प्रकार का संघर्ष प्राणिमात्र के कार्य इसी संघर्ष में निहित होते हैं। ऐतिहासिक वस्तु–सामग्री के रूप में परिवर्तन का आधार संघर्ष ही होता है।

भारतीय इतिहास की अवधारणा में कर्म को प्रधानता दी गयी है। कर्मसिद्धांत का अर्थ यह है कि मनुष्य जैसा कर्म करत है, उसके अनुसार वर्तमान में फल प्राप्त करता है। प्रत्येक कर्म के पीछे एक शक्ति होती है, जो भविष्य में स्वानुरूप फल की प्राप्ति कराती है। कर्म–फल का यह सिद्धांत इतिहास में कारण–कार्य के संबंध की पुष्टि करता है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि भारतीयों को कारण–कार्य संबंध का ज्ञान इतिहास की प्रारम्भिक अवस्था में ही है।

कर्म–सिद्धांत को ध्यान में रखकर महर्षियों ने मानव–जीवन को चार आश्रमों में विभक्त किया है–ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रथ तथा सन्यास। भारत में सामाजिक वर्गीकरण का आधार भी कर्म रहा है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र वर्णों का विभाजन कर्म के आधार पर हुआ है। यह आश्चर्य की बात है कि भारतीय अतीत की चिन्ता नहीं करता है। उसके जीवन का एकमात्र लक्ष्य भावी इतिहास का निर्माण होता है। वर्तमान में कर्म का लक्ष्य मोक्ष प्राप्त करना तथा आवागमन से मुक्ति प्राप्त करना है।

ऐतिहासिक योजना का एकमात्र उद्देश्य जीवन, मृत्यु अथवा संसार से मुक्ति प्राप्त करना है। इतिहास इस उद्देश्य की प्राप्ति में सतत क्रियाशील है और विश्वास है अंतिम उद्देश्य की प्राप्ति में सदैव अग्रसर रहेगा। मोक्ष–प्राप्ति इसका अंतिम उद्देश्य है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के पश्चात् मानव इतिहास का अंत हो जाता है।

भारतीय अवधारणा के अनुसार इतिहास का सिद्धांत व्यक्तिवादी है। सम्पूर्ण समाज के मोक्ष की परिकल्पना भारतीय विचारधारा के विपरीत है। बौद्ध, जैन तथा सिखमर्ध में मोक्ष को प्रधान मानकर उसकी प्राप्ति के साधनों का प्रतिपादन किया गया है। बौद्ध धर्म में अष्टांगिक मार्ग मोक्ष प्राप्ति का साधन है–1. सम्यक् दृष्टि, 2. सम्यक् संकल्प, 3. सम्यक् वाक्, 4. सम्यक् कर्मांत, 5. सम्यक्

आजीव, 6 सम्यक् व्यायाम, 7. सम्यक स्मृति, 8. सम्यक् समाधि। कर्म को ही मानव–इतिहास का कारक माना गया है। बौद्ध धर्म के अनुसार सन्यास की अपेक्षा गृहस्थाश्रम में कार्य के द्वारा मनुष्य मोक्ष प्राप्त कर सकता है। न केवल गौतम बुद्ध, बल्कि भक्ति आंदोलन के समाज सुधारक संतों ने ज्ञान–मार्ग को अस्वीकार करके कर्म तथा भक्ति को मोक्ष का साधन स्वीकार किया है। मोक्ष से मानव–इतिहास का अंत होता है। कर्म का सिद्धांत किसी भी रूप में कर्तव्य भावना से पलायन का सिद्धांत नहीं है। कर्म के आधार पर मनुष्य पूर्वांकित इतिहास की रेखाओं को परिवर्तित करने में भी समर्थ है। संकल्प–शक्ति से मनुष्य युग प्राणी है और कर्म के रूप में अनुदित करने की क्षमता रखता है। वह इतिहास को एक निश्चित दिशा प्रदान करने का सामर्थ्य रखता है। कर्म–सिद्धांत की भाग्यवादी व्याख्या बड़ी स्वाभाविक है। केवल साधारण अशिक्षित जवाब जनता में ही नहीं, अपितु बुद्धिवादियों तथा आजीवक सम्प्रदाय में सर्वथा अज्ञात नहीं रहा है।

संदर्भ–सूची :

1. ब्रह्मपुराण–27–2
2. आध्यात्मपुराण–66–4–51
3. मार्कण्डेयपुराण–57–62
4. ब्रह्मपुराण–70–24
5. गीता तथा रामचरितमानस में अवतारवाद के सिद्धांत
6. सामाजिक तथा युगचक्रीय परियोजना
7. इंडिया ऐज डिस्क्राइब्ड इन अर्ली टैक्सट्स ऑफ बुद्धिज्म एण्ड जैनिज्म, लन्दन, 1941
8. हिन्दू सोशल इंस्टिच्यूशनल, बम्बई, 1938
9. द सोशल ऑर्गनाइजेशन इन नार्थ इस्ट इण्डिया इन बुद्धिज टाइम, कलकत्ता, 1920